International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक एवं राजनीतिक शास्त्र

डॉ. चंचल राठौर
असिस्टेंट प्रोफेसर, आरएनटी बी. एड. एवं बीएसटीसी कॉलेज चित्तौड़गढ़
ईमेल आई. डी. –friends23rthr98@gmail.com

अमूर्त

ज्ञान परंपराओं की दृष्टि से सृष्टि रचना से संबंधित संपूर्ण विचारों को मोटे तौर पर दो तरह से परिभाषित किया गया है। एक ब्रह्म केंद्रित है और दूसरा अब्राह्मिक है, जहां दोनों ज्ञान परंपराओं ने मानवीय अस्तित्व की मौलिक खोज और सृष्टिकर्ता के साथ उसके संबंध को खोजने और उत्तर देने का प्रयास किया है। ब्रह्म–केंद्रित परंपरा मूल रूप से सृजन के ज्ञान को 'ब्रह्म' के रूप में परिभाषित करती है जहां सृष्टि सृष्टिकर्ता की अभिव्यक्ति है और इस संदर्भ में सृष्टिकर्ता एक बड़ी व्यवस्था या प्रणाली के अलावा और कुछ नहीं है, जो सृजन करता है और सृजन का कारण और प्रभाव भी है। इस ज्ञान परंपरा के अनुसार, सृष्टि और सृष्टिकर्ता दोनों एकता में एकात्मता के अलावा और कुछ नहीं हैं, और इस धरती पर प्रत्येक पदार्थ और प्राणी एक दूसरे से इसी प्रकार जुड़े हुए हैं। दूसरे शब्दों में सृष्टि अद्वैत रूप में विद्यमान है। दूसरी ओर, इस समझ से असहमति में निर्मित ज्ञान ने सृष्टि को 'अन्य' के रूप में परिभाषित किया, निर्माता के संदर्भ में जो सर्वशक्तिमान ईश्वर है और स्वयं रचना करता है, उसे बनाए रखता है और फिर अपनी रचना को नष्ट कर देता है। इसलिए सृष्टि और सृष्टिकर्ता के बारे में अब्राहमिक विचार द्वैतवादी है जहां ईश्वर और अस्तित्व दो अलग–अलग संस्थाएं हैं और स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में हैं। इस तरह सृष्टि और मानव अस्तित्व के बारे में ये दो अवधारणाएँ ज्ञान परंपराओं पर आधारित हैं, जहाँ एक ब्रह्म–केंद्रित है और दूसरा ईश्वर–केंद्रित है। इसके साथ, अस्तित्व के द्वैतवादी और अद्वैतवादी विचार सृष्टि और निर्माता के बीच संबंध को स्थापित करने और समझाने के लिए उभरते हैं। यह एक वैचारिक प्रस्थान का बिंदु बन जाता है जहां से मानव अस्तित्व के बारे में दो व्यापक एवं पृथक विचार, समान व्युत्पत्ति संबंधी विशेषताओं के साथ दो अलग–अलग और विशिष्ट सभ्यताओं के निर्माण में तब्दील होने लगते हैं। यह ज्ञान परंपराओं के आधार पर मानवीय गतिविधियों और विचारों के पृथक्करण का पहला और प्रारंभिक विभाजन कहा जा सकता हैं।

कीवर्डः भारतीय राजनीति, समाजशास्त्र, धर्म और राजनीति, सामाजिक न्याय

परिचय

भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक एवं राजनीतिक शास्त्र का अध्ययन प्राचीन भारतीय समाज और राज्य व्यवस्था की समझ को उजागर करता है। भारतीय समाज ने प्राचीन काल से ही राजनीतिक विचारों और सामाजिक संरचनाओं को सुसंगत और व्यवस्थित रूप से समझने का प्रयास किया है। चाणक्य का अर्थशास्त्र और महाभारत के विभिन्न उपदेश, जैसे कि

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

कर्तव्य और अधिकार, राजनीति के मूल सिद्धांतों को स्थापित करते हैं। इसके साथ ही, वेदों और उपनिषदों में वर्णित आदर्श और नैतिक विचारों का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा।

भारतीय राजनीतिक शास्त्र में राज्य के उद्देश्य, शासन व्यवस्था, नीति निर्माण, और समाज के हर वर्ग को न्याय देने की परंपराएँ दी गईं हैं। राजधर्म और धर्मराज के सिद्धांतों का पालन करते हुए भारतीय शास्त्रों ने समाज में समानता, न्याय और समृद्धि की अवधारणा को महत्व दिया। इस परंपरा में ष्लोक कल्याणष और ष्धर्मष के बीच संतुलन बनाने के विचार को प्रमुखता दी गई है, जो आज भी भारतीय समाज में प्रासंगिक हैं। भारतीय राजनीतिक शास्त्र का उद्देश्य न केवल सरकार के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को समझना है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक धारा के साथ राजनीतिक परिप्रेक्ष्य को जोड़ने का है।

इस अध्ययन में हम भारतीय समाज के विविध दृष्टिकोणों, प्राचीन काव्य, शास्त्र और धर्मग्रंथों के माध्यम से सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था का विश्लेषण करेंगे, ताकि हम समझ सकें कि भारतीय परंपराओं में राजनीति और समाज के रिश्ते का निर्माण किस प्रकार हुआ। भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक और राजनीतिक शास्त्र का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इस परंपरा ने समय–समय पर समाज के साथ–साथ शासन के सिद्धांतों का विस्तार किया है। प्राचीन भारत में राजनीति और समाज की परिभाषा केवल राज्य के शासन तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्यों से भी जुड़ी हुई थी। भारतीय समाज का आधार और उसकी संरचना के बारे में विचार शास्त्रों और ग्रंथों में मिलता है, जिसमें न्याय, समानता और धर्म का अत्यधिक महत्व है।

उदाहरण के तौर पर, अर्थशास्त्र में चाणक्य ने न केवल शासन और प्रशासन की नींव रखी, बल्कि राज्य के अंदर सामाजिक न्याय, कर्तव्य, और समाज की भलाई के लिए नीति निर्माण की प्रक्रिया पर भी गहन विचार व्यक्त किए। इसी तरह, महाभारत और रामायण जैसे ग्रंथों में राजनीतिक और सामाजिक संदर्भ में कई महत्वपूर्ण उपदेश दिए गए हैं, जो न केवल उस समय के समाज को दिशा दिखाते थे, बल्कि आज भी उन शिक्षाओं का पालन किया जाता है। भारतीय शास्त्रों में राज्य के धर्म (राजधर्म) का वर्णन भी प्रमुख रूप से किया गया है, जिसके तहत शासनकर्ताओं से यह अपेक्षाएँ थीं कि वे न्यायपूर्ण शासन करें और समाज के हर वर्ग का ध्यान रखें। इस परंपरा में लोकतंत्र, प्रजा का कल्याण, और धर्म का पालन करने पर बल दिया गया है।

वहीं, भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक संरचना को भी महत्वपूर्ण माना गया है, जिसमें विभिन्न जाति, वर्ग और परिवारों के अधिकारों और कर्तव्यों का निर्धारण किया गया था। यह संरचना समय–समय पर समाज में संतुलन बनाए रखने के लिए विकसित होती रही है, और इसके द्वारा सामाजिक व्यवस्था और राजनीतिक सत्ता के बीच एक आदर्श संबंध स्थापित किया गया है। इस प्रकार, भारतीय सामाजिक और राजनीतिक शास्त्र ने न केवल सरकार की जिम्मेदारियों और कर्तव्यों को स्पष्ट किया, बल्कि उसने समाज में हर व्यक्ति के अधिकार,

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

कर्तव्य, और भूमिका का निर्धारण भी किया। यह शास्त्रों का समृद्ध और विविध परिप्रेक्ष्य आज भी हमारे समाज में प्रासंगिक और प्रेरणादायक है।

सामाजिक शास्त्र

भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक शास्त्रों के तौर पर वेद, उपनिषद, दर्शन, न्याय, और आचार–विचार शामिल हैं. इनके जरिए समाज के हर पहलू पर चिंतन किया गया है।
भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक शास्त्रों की खास बातें:

- भारतीय ज्ञान परंपरा में समाज के दर्शन और ज्ञान के दर्शन के बीच अंतर है।
- समाज का दर्शन ज्ञान से जुड़कर अपने आप को प्रकाशवान करना चाहता है।
- भारतीय ज्ञान परंपरा में वर्ण और आश्रम का बहुत महत्व है।
- जैन और बौद्ध चिंतन में वर्णगत असमानता और आश्रम व्यवस्था के बजाय ब्रह्मण और भिक्षु जीवन पर ज्यादा जोर दिया गया।
- भारतीय ज्ञान परंपरा में शिक्षा का मकसद लौकिक और परालौकिक समस्याओं को जानना और उनका समाधान निकालना था।
- भारतीय ज्ञान परंपरा में व्यक्तिगत जीवन से लेकर समाज के हर पहलू पर समग्र चिन्तन होता था।
- भारतीय ज्ञान परंपरा में आचार्यों, ऋषियों, और ग्रंथों की एक अखंड श्रृंखला रही है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में गुरुकुल प्रणाली के जरिए अध्ययन–अध्यापन होता रहा है. भारतीय परंपरा के अनुसार हमारे चिंतन में कई धाराएं हैं, लेकिन पश्चिम ने केवल एक ही धारा को समझा और फैलाया है। विदेशी ताकतों ने हमेशा से ही हमारी ज्ञान परंपरा को दबाकर रखने की कोशिश की है। हमारे विज्ञान और सेवा भाव को हमेशा नीचा दिखाने की कोशिश की गई है, जिसके कारण हमने अपनी समृद्ध ज्ञान परंपरा को बहुत हद तक खो दिया है। आज फिर से हमें अपनी ज्ञान परंपरा और सामाजिक व्यवस्था को समझने और अपने तरीके से परिभाषित करने की जरूरत है। अपनी ज्ञान परंपरा, सामाजिक व्यवस्था और जीवनशैली को बाजारवाद से बचाने की जरूरत है। हमें पश्चिमी सभ्यताओं और विदेशी ज्ञान–विज्ञान को दरकिनार कर अपनी परम्पराओं और मान्यताओं का पुनरोत्थान करते हुए भारतीयता में पूरी तरह रमना होगा। सभी विचारधाराओं के लोगों से संवाद करना होगा और उनको साथ लेकर चलना होगा। हमारी परंपरा विविधताओं का सम्मान करने की है और उनमें एकता स्थापित करने की है, जिसे आज अच्छी तरह से व्यवहार में उतारना होगा ताकि भारत पूरे विश्व में एक बड़ी ताकत के रूप में उभर सके।
भारतीय ज्ञान परंपरा हजारों वर्ष पुरानी है। इस ज्ञान परंपरा में आधुनिक विज्ञान प्रबंधन सहित सभी क्षेत्रों के लिए अद्भुत खजाना है। भारतीय दृष्टिकोण से ही ज्ञान परंपरा का अध्ययन कर हम एक बार फिर विश्व गुरु बन सकते हैं। हमें अपनी मानसिकता को बदलकर

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

अपने जीवन में भारतीयता को अपनाने की जरूरत है। पश्चिम के विकासवादी मॉडल को छोड़कर ही हम दुनिया में खुशहाली ला सकते हैं।

राजनीतिक शास्त्र

भारतीय ज्ञान परंपरा में राजनीतिक शास्त्र का अध्ययन, राजा, राज्य, और शासन से जुड़े सिद्धांतों और व्यवस्थाओं पर आधारित है. राजनीतिक शास्त्र को राजनीति विज्ञान भी कहा जाता है।

भारतीय राजनीतिक शास्त्र के बारे में जरूरी बातें:

- भारतीय राजनीतिक दर्शन में धर्म, आध्यात्म, और नैतिकता काफी महत्व रखता है।
- मनु, कौटिल्य, और शुक्र जैसे विचारकों के विचारों में धर्म, समाज, और राज्य के बीच संबंधों का जोर है।
- राजा राममोहन राय ने पश्चिम की सभ्यता, संस्कृति, और राजनीति का अध्ययन किया।
- दयानंद सरस्वती ने वैदिक सभ्यता और संस्कृति के गौरव को फिर से स्थापित करने का प्रयास किया।
- प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन के स्रोतों में वेद, पुराण, रामायण, महाभारत, शिखालेख, स्तंभ लेख, गुफालेख, और ताम्रलेख शामिल हैं।
- राजशास्त्र, नृपशास्त्र, राजविद्या, क्षत्रिय विद्या, दंड नीति, नीति शास्त्र, और राजधर्म जैसे शास्त्रों में राज्य और राजा से जुड़ी जानकारी मिलती है।

सामान्यतः राजनीतिक चिन्तन को केवल पश्चिम की ही परम्परा एवं थाती माना जाता है परन्तु भारत की लगभग पाँच हजार वर्षों से भी अधिक प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति में राजनीतिक चिन्तन की पर्याप्त गौरवशाली परम्परा रही है। पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन की तुलना में भारतीय राजदर्शन व्यापक धर्म की अवधारणा से समृद्ध है तथा उसका स्वरूप मुख्यतः आध्यात्मिक एवं नैतिक है। मनु, कौटिल्य तथा शुक्र के चिन्तन में धर्म, आध्यात्म, इहलोक संसार, समाज, मानव जीवन, राज्य संगठन आदि के एकत्व एवम् पारस्परिक सम्बन्धों का तानाबाना पाया गया है।

आधुनिक काल में भारतीय राजनीतिक दर्शन और संस्कृति के व्यवस्थित अध्ययन का आरम्भ 18वीं शताब्दी के अन्त में मानी जाती है। सन् 1784 में बंगाल में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना होने के बाद राजनीतिक विचारों को एक नई दिशा मिली। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस सोसायटी की स्थापना में ब्रिटिश हित भी छिपे हुये थे जो अपनी सत्ता को सुदृढ करने के लिए भारतीय परम्पराओं और उसके इतिहास का परिचय प्राप्त करना चाहते थे। लेकिन एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना से भारतीय राजनीति को भी हवा मिली। 19वीं शताब्दी के आरम्भ में दर्शन और धर्म के अनेक प्राचीन ग्रन्थों का संस्कृत से अंग्रेजी तथा अन्य यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद कर लिया गया था।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

पश्चिम के वर्चस्व को स्वीकार करते हुए अंग्रेजी सभ्यता, संस्कृति, राजनीति एवं उद्योगवाद को देखकर उनकी सफलता तथा अपनी दयनीय दुरावस्था के कारकों को समझने का प्रयास राजा राममोहन राय ने किया। दयानन्द सरस्वती ने वेद, वैदिक सभ्यता और संस्कृति के गौरवपूर्ण वैभव को पुनः प्राप्त करने के लिए विवेकपूर्ण सनातन आर्य धर्म का मार्ग प्रशस्त किया।

यूरोकेन्द्रीयता और भारतीय परम्परा का सतही ज्ञान

प्राचीन भारत में राजत्व सम्बन्धी चिन्तन तथा उसके स्वरूप के सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों में बड़ी भ्रामक धारणा रही है। उनकी यूरोकेन्द्रीयता भारतीय राजदर्शन की श्रेष्ठता को स्वीकार करने में सबसे बड़ी बाधा थी। पश्चिम के कई विद्वानों ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक दर्शन को यह कहकर खारिज कर दिया कि भारतीय चिन्तकों और दार्शनिकों की दृष्टि धर्मशास्त्र और आध्यात्मवाद पर केन्द्रित है। यह उनके भारतीय चिन्तन के सतही ज्ञान को दर्शाने के साथ–साथ उनके पूर्वाग्रह को भी दर्शाता है।

मैक्समूलर, ब्लूमफील्ड और डर्निंग जैसे विद्वानों ने कह दिया कि भारतीय दर्शन में राजनीतिक चिन्तन का अभाव है। ये पश्चिम विद्वान यह मानते थे कि भारतीय दर्शन का स्रोत वस्तुतः हिन्दू साहित्य है। इसके आधार पर ही उन्होंने यह धारणा बना ली कि भारतीय साहित्य में संदिग्ध आदर्शवाद, अव्यावहारिक और पारलौकिक मूर्खतापूर्ण बातों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इस भ्रमपूर्ण विचार का कारक भारत पर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन को भी माना जा सकता है जो भारतीय राजनीतिक चिन्तकों को किसी भी प्रकार का श्रेय नहीं देना चाहते थे। इस तथ्य को एक अन्य पश्चिम विद्वान मैक्सी (Chester Collins Mauey) ने इन शब्दों में स्वीकार किया है–पाश्चात व्याख्याकारों ने पूर्वी विद्वानों के राजनीतिक विचारों के साथ ही नहीं, प्राचीन हिन्दू राजनैतिक विचारों के साथ भी बुरा व्यवहार किया है। हिन्दू राजनैतिक संस्थाओं और विचारों के सम्बन्ध में हमें ऐसे स्रोतों से ज्ञान प्राप्त हुआ है जो भारतीय जीवन और चरित्र के राजनैतिक पहलू पर निष्पक्ष विचार नहीं रख सकते। भारतवंशियों को इस प्रकार देखा गया जैसे वे राजनीतिक उत्तरदायित्व के सर्वथा अयोग्य हैं। दरअसल, अज्ञानवश या फिर जानबूझकर भारतीय विचारकों को या राजनीतिक दार्शनिकों की उपेक्षा की गई है। पश्चिम विद्वानों की भारतीय राजनीति के बारे में भ्रमपूर्ण बातें इसलिए भी निराधार साबित हो जाती हैं कि प्लेटो और अरस्तू से शताब्दियों पहले भारतीय राजदर्शन की नींव पड़ चुकी थी। यही नहीं, भारतीय राजनीतिक दर्शन का इतिहास भी उतना ही पुराना है जितनी यहाँ की सभ्यताएँ, संस्कृति और धर्म आदि। प्राचीन यूनानी राजनीतिक चिंतन के महत्वपूर्ण स्रोत प्लेटो की रचनाएँ– रिपब्लिक , स्टेट्समैन तथा लॉज मानी जातीं है तथा अरस्तू की रचना पॉलिटिक्स मानी जाती हैं तो भारतीय राजनीतिक चिंतन के स्रोत वैदिक साहित्य, जैन एवं बौद्ध साहित्य, कौटिल्य का अर्थशात्र, कामन्दक का नीतिसार, शुक्राचार्य का शुक्रनीति, रामायण और महाभारत जैसे ग्रन्थ हैं। ऋग्वेद और अथर्ववेद में राजशास्त्र से संबंधित कई श्लोक हैं।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

ज्ञान–विज्ञान ही नहीं, राजनीति के मामले में भी भारत किसी भी देश से कमतर नहीं रहा है। जिस तरह यूनानी विद्वान अरस्तू के राजनीतिक विचारों को महत्वपूर्ण समझते हैं, उसी तरह भारत में अरस्तू के समकालीन भारतीय राजनीतिक चिन्तक कौटिल्य का महत्व है। मैक्सी तो यहाँ तक कहता है कि भारत का राजनीतिक इतिहास यूरोप के इतिहास से भी अधिक प्राचीन है जबकि गैटिल भी भारतीय साहित्य में राजनीतिक दर्शन की महत्ता को स्वीकार करता है और इसे ज्ञान की एक पृथक शाखा मानता है।

राजशास्त्र पर पृथक ग्रन्थ ढूंढ़ने का प्रयत्न

पाश्चात्य विद्वानों के भ्रम का एक मुख्य कारण यह भी था कि वे प्राचीन भारतीय वाङ्मय में से राजशास्त्र पर पृथक् ग्रंथ ढूँढने लगे, जबकि वास्तविकता यह थी कि नीतिशास्त्र अथवा राजशास्त्र (राजधर्म) उस सार्वभौमिक और व्यापक धर्म का अंश था जो व्यक्ति, समाज और राज्य सभी के कार्यकलापों का नियमन करता था। बीसवीं शती में कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र के प्रकाशन के पश्चात् यह तथ्य प्रमाणित हो चुका है कि राजत्व, राजनय, राजनीति आदि का अध्ययन प्राचीन भारत में एक विशेष विषय के रूप में महत्व प्राप्त था। प्राचीन काल से ही भारत में राज्य एक वृहद समाज का अंग समझा जाता था। प्राचीन भारतीय विचारकों ने जीवन एवं जगत् के सर्वांग का विचार कर उसके अनुरूप शास्त्र और व्यवस्थाओं का नियमन किया। यही कारण है कि भारत में व्यापक चिन्तन एवं शास्त्र प्रणीत हुए। वैदिक वाङ्मय पुराण, जैन एवं बौद्ध साहित्य, धर्मशास्त्र, नीति–शास्त्र, अभिलेख मुद्राएँ आदि राजत्व सम्बन्धी भारतीय विचारों के आधार एवं आकार ग्रंथ हैं।

राजदर्शन और नाम की समस्या

पश्चिम के विद्वानों को भारतीय राज व्यवस्था पर सवाल उठाने का मौका इसलिए भी मिल जाता है क्योंकि प्राचीन भारत में इस विषय को दूसरे नामों से जाना–समझा गया। महाभारत के शांतिपर्व में इसे राजधर्म की संज्ञा दी गई तो अन्य जगह यह दण्डनीति, नीतिशास्त्र या फिर अर्थशास्त्र आदि नामों के रूप में आया।

देखा जाये तो प्राचीन भारत में राज–शासन का ही अधिक महत्व था। राजाओं के अपने नियम–कानून और कर्तव्य थे, इन्हें ही राजधर्म कहा जाता था। वर्तमान परिभाषाओं में भी देखें तो राजशास्त्र का मतलब राज्य और शासन के अध्ययन में ही समाहित हैं, इसलिए राजधर्म को भी राजशास्त्र ही समझना अधिक समीचीन होगा। प्राचीन भारत में एक और शब्द दण्डनीति आता है। इसका सम्बन्ध भी शासन के कार्यों अथवा शासन तन्त्र से ही रहा। इसे श्प्रशासन का शास्त्रश भी कहा गया। कौटिल्य का मानना है कि मनु, वृहस्पति और शुक्राचार्य द्वारा वर्णित चार विद्याओं में से दण्डनीति एक है। प्राचीन भारतीय विचारकों का मानना था कि प्रभुसत्ता ही राज्य का आधार है। इसलिए भारतीय विचारक मानते थे कि बिना दण्ड के किसी प्रकार के राज्य का अस्तित्व सम्भव नहीं है। दण्डनीति का समर्थक मनु कहते हैं कि जब सभी लोग सो रहे होते हैं तो दण्ड उनकी रक्षा करता है। उसी के भय से लोग न्याय

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

का मार्ग अपनाते हैं। शासन ् तथा प्रजापति द्वारा शासनतन्त्र पर लिखित ग्रंथ भी दण्डनीति के नाम से ही प्रसिद्ध हैं। डॉ. जायसवाल इस दण्ड नीति को सरकार के सिद्धान्त नाम देते हैं।

प्राचीन भारत में अर्थशास्त्र को राजशास्त्र के अन्तर्गत माना गया है। विद्वानों में विभ्रम की एक वजह यह भी हमेशा बनी रही। वर्तमान समय में अर्थशास्त्र शब्द का प्रयोग आमतौर पर धन व अर्थ सम्बन्धी अध्ययन के लिए किया जाता है जबकि कौटिल्य का मानना है कि अर्थ शब्द से जिस तरह मनुष्य के व्यवसाय व धंधे का आशय निकलता है, ठीक उसी तरह वे जिस भूमि पर रहकर व्यवसाय चलाते हैं वह भूमि भी सम्बोधित हो सकती है, इसलिए भूमि को प्राप्त करने व उसका पालन करने का जो साधन है, उसे भी अर्थशास्त्र कहना उचित है। अर्थशास्त्र को नीतिशास्त्र अथवा दण्डनीति के ही अर्थ में लिए जाने की एक और भी वजह रही क्योंकि राज्य व शासन के विषय पर प्राचीन भारत में लिखा गया सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ अर्थशास्त्र के नाम से ही पुकारा गया। शुक्रनीति में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि अर्थशास्त्र का क्षेत्र केवल धन–सम्पत्ति प्राप्त करने के उपायों का विवेचन करना ही ं नहीं है, बल्कि शासक शास्त्र के सिद्धान्तों को भी प्रस्थापित करता है। अमरकोश में भी अर्थशास्त्र और दण्डनीति को समानार्थक माना गया है। हालांकि अर्थशास्त्र के प्रथम अध्याय पर गौर करें तो प्रतीत होता है कि कौटिल्य दण्डनीति को ही महत्व देता है और उसे यही नाम देना चाहता है।

प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन के स्रोत

प्राचीन भारतीय ऋषि परम्परा, चिन्तन मनन एवं उनके शास्त्रीय स्वरूप में अग्रणी रही है। यद्यपि उनके राजनीति विषयक विचार मुख्य विषय के रूप में प्रतिपादित नहीं थे तथापि वैदिक मंत्र स्वयं में विचारों की विपुल राशि माने गये हैं जिनमें जीवन के विविध पक्षों का चिन्तन हुआ है। इन्ही विचारों की जीविका पर कालान्तर मे जब राज्यों, राष्ट्रों तथा उनकी शासन प्रणालियों का विकास हुआ तो स्वतंत्र रूप से एक आचार्य परम्परा भी विकसित हुई जिसने राजनीतिक विषयों पर तत्युगीन विचारों का प्रतिपादन किया। यद्यपि राजत्व सम्बन्धी स्वतंत्र ग्रंथ कम हैं फिर भी जो थोड़े ग्रंथ उपलब्ध हैं, उनके रचनाकारों, प्रणेताओं तथा चिन्तकों ने राजनीतिक विचारों को महत्व के साथ प्रतिपादित किया है। वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत आदि में प्रसंगतः इन विचारों का उल्लेख हुआ है।

प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारों का परिचय चतुर्थ सदी ई. पू. के महान आचार्य एवं विचारक कौटिल्य (अन्य नाम चाणक्य एवं विष्णुगुप्त) के श्अर्थशास्त्रश नामक ग्रंथ के प्रथम वाक्य से मिल जाता है, जिसमें पूर्ववर्ती आचार्यों तथा उनके विचारों को उद्धृत किया गया है। इनमें भारद्वाज, विशालाक्ष, पराशर, विशुन, कौणदन्त, वातव्याधि, बाहुदन्तीपुत्र, कणिड्क, कात्यायन, घोटमुख, दीर्घ चारायण, विशुनपुत्र और किंजल्क उल्लिखित हैं। इनके मतों का उद्धरण दिया गया है जिससे यह ज्ञात होता है कि राजत्वविषयक विचारों का दीर्घकालीन

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

इतिहास रहा है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत में विचार–सम्प्रदायों की सत्ता विद्यमान थी। इनकी परम्परा का आधार गुरु–शिष्य परम्परा रही है। कौटिल्य अपने युग के महान् राजनीतिक विचारक थे। अर्थशास्त्र में उन्होने अनेक विचारकों के मतों का उल्लेख उनके विचार सम्प्रदायों के साथ किया है जैसे– मानवाः, बार्हस्पत्याः, औशनसाः, पाराशराः, आम्भीयाः आदि। इन्ही के साथ ष्आचार्याः अपरे" "एके" – इन शब्दों के प्रयोग के द्वारा भी कौटिल्य ने पूर्ववर्ती मतों को उद्धृत किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में राजनीतिक विचारों का अपना एक इतिहास रहा है। महाकाव्यों में महाभारत एक ऐसा ग्रंथ है जिसमें राजशास्त्र विचारकों तथा इस विषय के प्रणेताओं के नामोल्लेख मिलते हैं यथा– विशालाक्ष, इन्द्र, बृहस्पति, अनु, शुक्र, भारद्वाज, गौरशिरा, मातरिश्वा, कश्यप, वैश्रवण, उतध्य, वामदेव, शम्बर, कालकवृक्षीय, वसुहोम और कामन्दक। इनमें से दस आचार्य नवीन है तथा छः आचार्यों के नाम कौटिल्य ने भी उद्धृत किए हैं। उदाहरणार्थ विशालाक्ष के नीतिशास्त्र में दस हजार, इन्द्र के नीतिशास्त्र में पाँच हजार, और बृहस्पति के अर्थशास्त्र में तीन हजार अध्याय थे।

महाभारत के ही शांतिपर्व में कीर्तिमान्, कर्दम, अनंग, अतिवल, वैण्य, पुरोधा काव्य और योगाचार्य नामक राजनीतिक विचारकों का भी विवरण मिलता है। इसके अतिरिक्त राजशास्त्र विचारक मनु, उशना, मरुत और प्राचेतस के द्वारा रचित श्लोकों का भी तत्सम उद्धरण मिलता है। इसी प्रकार कामन्दक ने नीतिसार में प्राचीन भारतीय राजशास्त्र विचारकों को उद्घृत किया है। यद्यपि श्मयश एवं श्पुलोमाश को छोड़कर अन्य पूर्ववर्ती हैं। इसी प्रकार चण्डेश्वर के 'राजनीति रत्नाकर' में अनेक आचार्यों और उनके ग्रंथों के मत प्रमाण–स्वरूप उद्घृत हैं। व्यास, कात्यायन, नारद, कुल्लूकभट्ट जैसे विचारक आचार्यों के ग्रंथ तो उपलब्ध नहीं हैं किन्तु उनके उद्धरण अवश्य मिलतें हैं।

प्रख्यात विचारक मनु द्वारा रचित मनुस्मृति एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसमें विविध सामाजिक एवं राजनीतिक विषयों पर विचार प्रकट हैं। मित्रमिश्र द्वारा रचित 'वीरमित्रोदय' में विज्ञानेश्वर, बृहत्पाराशर, अपरार्क, गोतमबृहस्पति नारद, अंगिरा और कात्यायन के नामोल्लेख हैं। इसी प्रकार मध्यकाल में सोमदेवसूरि (नीतिवाक्यामृतम् तथा यशस्तिलकचम्पू) भी एक महत्वपूर्ण विचारक आचार्य थे। इनकी विशेषता यह थी कि ये आचार्य कौटिल्य और कामन्दक से तो परिचित थे ही, इनके अतिरिक्त गुरू, शुक्र, विशालाक्ष, परीक्षित, पराशर, भीम, भीष्म, भारद्वाज आदि प्राचीन आचार्यों के ग्रंथों से भी परिचित थे। इन विवरणों से यह ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत में ऐसे विचारक, मनीषी आचार्यों तथा उनके विचार सम्प्रदायों की सत्ता थी जिन्होने राजत्व, राजनय, राजनीति के शास्त्रों को तो विकसित किया ही, वे उस विचार–परम्परा के महत्वपूर्ण अधिष्ठान भी थे।

प्राचीन भारतीय राजत्व के विचारको की लम्बी सूची मिलती है। वैदिक, जैन, बौद्ध सभी चिन्तनपरम्पराओं में इसके स्वरूप मिलते हैं। किन्तु मुख्य रूप से कौटिल्य, मनु, याज्ञवल्क्य,

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

शुक्र तथा कामन्दक को राजनय परम्परा के महत्वपूर्ण विचारकों तथा शास्त्र प्रणेताओं में परिभाषित किया गया है। आचार्य कौटिल्य ने अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में अपने समय की समस्त राजनीतिक विचारों की समालोचना की है। यह राजव्यवस्था के लिए एक विधिक ग्रंथ है। कौटिल्य के विचारों में अर्थशास्त्र के प्रकाश में एक व्यक्ति न केवल औचित्य, मितव्ययता एवं सौन्दर्यपूर्ण कार्यों को सम्पन्न कर सकता है अपितु वह अनुचित, अमितव्ययतापूर्ण और असुन्दर कार्यों को छोड़ भी सकता है। इस ग्रंथ में स्वाभाविक एवं कृत्रिम शास्त्रों के बीच धर्म और अधर्म के बीच, नय और अनय के बीच तथा उचित और अनुचित के बीच अन्तर बतलाया गया है। इस ग्रंथ के प्रणयन में आचार्य कौटिल्य ने तत्युगीन राजनीति के ग्रंथों पर ही ध्यान केन्द्रित नहीं किया वरन इसे अपने उस व्यक्तिगत अनुभव एवं ज्ञान पर भी आश्रित रखा जो तत्कालीन भारत की राजनीतिक स्थिति और संस्थाओं का वे पाश्चात्य जगत् की राजनीतिक विचारधाराओं से भी परिचित थे। तक्षशिला विश्वविद्यालय के इस महान विचारक आचार्य ने राष्ट्रीय एकत्व और सुशासन के लिए पाटलिपुत्र को केन्द्र बनाकर जो कार्य किया वह प्राचीन भारतीय विचारों के इतिहास में एक क्रांतिकारी कदम था। अर्थशास्त्र की खोज ने आचार्य चाणक्य की प्रखर मेधा को प्रकाशित किया है।

अब यह स्पष्ट हो चुका है कि भारत ने उन राजनीतिक विचारों को बहुत पहले ही अभिव्यक्त कर दिया था जो आज पश्चिमी विचारकों यथा– प्लेटो, अरस्तू के नाम संलग्न हैं। मौर्य शासक चन्द्रगुप्त मौर्य के गुरु और प्रधान अमात्य आचार्य चाणक्य ने राजत्व के सभी अंगों पर अत्यन्त सूक्ष्म निर्देश दिया है। कुल 15 अधिकरणों तथा 150 अध्यायों में विभाजित अर्थशास्त्र राजनीति की समस्याओं के प्रतिवैचारिक दृष्टिकोण का चित्रित रूप प्रस्तुत करता है। इसमें राजनीतिक विचारों का उल्लेख अग्रिम अध्यायों के प्रसंगानुसार विभिन्न स्थानों पर किया गया है। इसमें राज्य की उत्पत्ति और स्वरूप, राज्यों के प्रकार, राज्य के उद्देश्य, राजा और राजपद, उत्तराधिकार, मंत्रिपरिषद, स्थानीय प्रशासन, न्यायिक व्यवस्था, दण्डनीति, आर्थिक नीति, दौत्य सम्बन्ध, गुप्तचर व्यवस्था, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, धर्म और नैतिकता आदि पर पर्याप्त विचार और नीति निर्देशित हैं।

इसी क्रम में प्रमुख विचारक आचार्यों में मुख्य स्मृतिकारों यथा मनु और याज्ञवल्क्य का उल्लेख किया जाता है। मनु (ईसा पूर्व 200 से ई. 200 के मध्य) के ग्रंथ मनुस्मृति तथा याज्ञवल्क्य के ग्रंथ (ई.पू. 150 से 200 के मध्य) 'याज्ञवल्क्य स्मृति' में राजनीतिक विचारों का संग्रह है। दोनो ही स्मृतियों में समाज, राज्य, शासन, न्याय–व्यवस्था, कर–व्यवस्था, परराष्ट्र सम्बन्ध आदि पर काफी लिखा गया है। इनमें उल्लिखित राज्य एवं शासन सम्बन्धी विचार भारतीय चिन्तन प्रणाली के श्रेष्ठ स्वरूप को अभिव्यक्त करते हैं।

कौटिल्यीय अर्थशास्त्र की परम्परा में गुप्तकालीन ग्रंथ कामन्दकीय नीतिसार तथा शुक्रनीति महत्वपूर्ण हैं जिनकी रचना आचार्य कामन्दक तथा शुक्र ने की । यद्यपि राजशास्त्र पर कार्य करने वाले विद्वान् इन ग्रंथों के रचनाकाल को लेकर एकमत नहीं है। डॉ. काशीप्रसाद

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

जयसवाल तथा डॉ. अनन्तसदाशिव अल्तेकर इसकी रचना छठीं–सातवी शती ई. के मध्य स्वीकारते हैं। इसी प्रकार शुक्रनीति की रचना डॉ. यू.एन. घोषाल 12वीं से 16वीं शती ई. के मध्य तथा डॉ. लल्लन जी गोपाल 19वीं शताब्दी मानतें हैं। इन ग्रंथों में दण्डनीति, राजा, राज्य, शासन, न्याय, कोष आदि पर पर्याप्त विचार किया गयाहै।

राजत्व सम्बन्धी विचारों पर केन्द्रित उपर्युक्त आचार्यों द्वारा प्रणीत ग्रंथों के अतिरिक्त सोमदेवसूरि, मित्रमिश्र (वीरमित्रोदय), चण्डेश्वर (राजनीति रत्नाकर) नीलकण्ठ (नीतिमयूख), भोजकृत (युक्तिकल्पतः) और बृहस्पति सूत्र भी यद्यपि परवर्ती हैं। फिर भी प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारों की शृंखला में पर्याप्त सामग्रियां देतें हैं। इनके अतिरिक्त वैदिक परम्परा के ग्रंथ, संस्कृत साहित्य, जैन एवं बौद्ध साहित्य, पाणिनि की अष्टाध्यायी, शिलालेख, ताम्रलेख आदि में भी पर्याप्त सूचनाएँ मिलतीं है, जिनसे प्राचीन भारत के राजत्व सम्बन्धी विचारकों के सम्बन्ध में सूचनाएँ मिलती हैं। प्राचीन भारतीय विचारों के ऐतिहासिक अध्ययन के क्रम में राजत्व सम्बन्धी विचारों के विशेष संदर्भ में यह कहना समीचीन होगा कि हिन्दू राजनीतिक विचारकों ने ग्रंथ प्रणयन में विचारों की अपेक्षा राजनीतिक संस्थाओं को केन्द्र में रखकर उनके महत्व, संगठन तथा कार्यप्रणाली पर विशद् प्रकाश डाला है। अनेक ऐसे विषय हैं जिनका प्रसंगतः ही उल्लेख हो जाता है। इसीलिए विभिन्न स्रोतों से उन विषयों का विवेचन करना पड़ता है। लेखन की अपेक्षा व्यावहारिक निर्देश भी आचार्यों के ग्रंथों की अनुपलब्धता का कारण रहा है। फिर भी इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत में राजनीतिक विचारकों की श्रेष्ठ परम्परा रही है जो आज भी राजनयिक संदर्भो में उपयोगी है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक और राजनीतिक शास्त्र के बारे में कुछ और महत्वपूर्ण बिंदु निम्नलिखित हैं :

1. **धर्म और नीति का सामंजस्यः** भारतीय शास्त्रों में धर्म को सर्वोच्च स्थान दिया गया है, और इसे राजनीति में भी केंद्रित किया गया है। राजधर्म का सिद्धांत यह बताता है कि राज्य का कर्तव्य है कि वह धर्म के अनुरूप शासन करे, ताकि समाज में न्याय, समानता और शांति बनी रहे। इसी तरह, भारतीय राजनीति में धर्म और नीति के बीच संतुलन बनाए रखने का प्रयास किया गया है।
2. **राज्य का उद्देश्यः** भारतीय राजनीतिक दर्शन में राज्य का मुख्य उद्देश्य प्रजा का कल्याण और समाज की सुरक्षा होता है। धर्मराज का विचार यह मानता है कि राजा को समाज में हर वर्ग के अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए, और शासन का मुख्य उद्देश्य प्रजा की सुख–शांति और विकास को सुनिश्चित करना होना चाहिए।
3. **स्वराज और लोकशक्तिः** भारतीय परंपरा में स्वराज (स्वतंत्रता) और लोकशक्ति (जनशक्ति) पर भी ध्यान दिया गया है। यह सिद्धांत महात्मा गांधी के विचारों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जिसमें कहा गया कि समाज का समग्र विकास तभी संभव है जब लोगों को अपनी राजनीतिक व्यवस्था में सक्रिय भागीदारी का अवसर मिले।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

4. **समाज की विविधता और उसके अधिकारः** भारतीय ज्ञान परंपरा में समाज को विभिन्न वर्गों, जातियों, और समुदायों में विभाजित किया गया, और प्रत्येक का विशेष स्थान तथा अधिकार निर्धारित किया गया। हालांकि, यह भी माना गया कि समाज में समानता और सहयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। प्राचीन भारतीय समाज में यह भी देखा जाता था कि प्रत्येक व्यक्ति को उसकी भूमिका के आधार पर अवसर दिए जाते थे।
5. **राज्य और समाज के बीच रिश्तेः** भारतीय राजनीतिक शास्त्र यह मानता है कि राज्य और समाज के बीच एक मजबूत रिश्ता होना चाहिए। समाज की सांस्कृतिक, धार्मिक और नैतिक आधारों को ध्यान में रखते हुए राज्य को नीतियों का निर्माण करना चाहिए, ताकि समाज में सामूहिक कल्याण को सुनिश्चित किया जा सके।
6. **आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारः** भारतीय ज्ञान परंपरा का प्रभाव आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारों पर भी देखा जा सकता है। महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, और डॉ. भीमराव अंबेडकर जैसे नेताओं ने भारतीय राजनीति के सामाजिक और राजनीतिक सिद्धांतों को परिभाषित किया और उन्हें समकालीन समय में लागू किया।
7. **राज्य और राजनीति की लोकतांत्रिक परिभाषाः** भारतीय शास्त्रों में राज्य के निर्माण में जन की भूमिका को भी महत्त्वपूर्ण माना गया है। पंचायती राज और लोकसभा जैसी संस्थाएं भारतीय राजनीति में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को बढ़ावा देती हैं, जो भारतीय परंपराओं के अनुसार सत्ता के विकेंद्रीकरण का पक्षधर हैं।
8. **नैतिकता और राजनीतिः** भारतीय ज्ञान परंपरा में राजनीति को केवल शक्ति और नियंत्रण के रूप में नहीं देखा गया, बल्कि इसे नैतिकता और कर्तव्य के साथ जोड़ा गया है। राजनीति और प्रशासन के सिद्धांतों में मानवता, करुणा, और नैतिक जिम्मेदारी को भी शामिल किया गया है।
9. **सामाजिक न्याय का दृष्टिकोणः** भारतीय राजनीतिक शास्त्र में सामाजिक न्याय का सिद्धांत भी महत्वपूर्ण है, जहां यह सुनिश्चित किया गया कि सभी नागरिकों को समान अधिकार प्राप्त हों, चाहे वे किसी भी जाति, धर्म, या वर्ग से हों। यह विचार धीरे–धीरे भारतीय संविधान और उसके अधिकारों में समाहित हुआ, जैसे आरक्षण प्रणाली।

संदर्भ

1. वर्मानी डॉण साक्षी (2023), मान परिदृश्य में भारतीय ज्ञान प्रणाली की प्रासंगिकता ।
2. रावल मोहितए (2023), आधुनिक संदर्भ में भारतीय ज्ञान प्रणालियों की उपयोगिता ।
3. नई शिक्षा नीति 2020
4. डा. सीताराम जायसवाल, शिक्षा का सामाजिक आधार।
5. वंशी सिंह एवं भूदेव शास्त्री, स्वतंत्र भारत में शिक्षा की प्रगति।
6. डा. मालती सारस्वत और प्रो. एस. एल. गौतम, भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास।
7. डा. एल. बी. बाजपेयी, भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक प्रवृत्तिया।

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048 9458

8. पवन के.वर्मा बी इंग इंडियन इनसाइड द रियल इंडिया.(आई एस बी एन 0.434.1391.9)
9. निक्की ग्रिहौल्ट इंडिया– कल्चर स्मार्ट क्विक गाइड टु कस्टम्स एंड एटिकेट आई एस बी एन